क्रान्तिकारी मार्ग में राम प्रसाद बिस्मिल का अमूल्य बलिदान

डॉ. चितरंजन कुमार रंजन
तिलकामांझी भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर (बिहार)

राम प्रसाद बिस्मिल (११ जून १८९७-१९ दिसम्बर १९२७) भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन की क्रान्तिकारी धारा के एक प्रमुख सेनानी थे, जिन्हें ३० वर्ष की आयु में ब्रिटिश सरकार ने फाँसी दे दी। वे मैनपुरी षड्यन्त्र व काकोरी-काण्ड जैसी कई घटनाओं में शामिल थे तथा हिन्दुस्तान रिपब्लिकन ऐसोसिएशन के सदस्य भी थे।

राम प्रसाद एक कवि, शायर, अनुवादक, बहुभाषाभाषी, इतिहासकार व साहित्यकार भी थे। *बिस्मिल* उनका उर्दू तखल्लुस (उपनाम) था जिसका हिन्दी में अर्थ होता है आत्मिक रूप से आहत। बिस्मिल के अतिरिक्त वे *राम* और *अज्ञात* के नाम से भी लेख व कवितायें लिखते थे।

ज्येष्ठ शुक्ल एकादशी (निर्जला एकादशी) विक्रमी संवत् १९५४, शुक्रवार को उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर में जन्मे राम प्रसाद ३० वर्ष की आयु में पौष कृष्ण एकादशी (सफला एकादशी), सोमवार, विक्रमी संवत् १९८४ को शहीद हुए। उन्होंने सन् १९१६ में १९ वर्ष की आयु में क्रान्तिकारी मार्ग में कदम रखा था। ११ वर्ष के क्रान्तिकारी जीवन में उन्होंने कई पुस्तकें लिखीं और स्वयं ही उन्हें प्रकाशित किया। उन पुस्तकों को बेचकर जो पैसा मिला उससे उन्होंने हथियार खरीदे और उन

हथियारों का उपयोग ब्रिटिश राज का विरोध करने के लिये किया। ११ पुस्तकें उनके जीवन काल में प्रकाशित हुईं, जिनमें से अधिकतर सरकार द्वारा ज़ब्त कर ली गयीं।

बिस्मिल को तत्कालीन संयुक्त प्रान्त आगरा व अवध की लखनऊ सेण्ट्रल जेल की ११ नम्बर बैरक में रखा गया था। इसी जेल में उनके दल के अन्य साथियोँ को एक साथ रखकर उन सभी पर ब्रिटिश राज के विरुद्ध साजिश रचने का ऐतिहासिक मुकदमा चलाया गया था।

११ जून १८९७ को उत्तर प्रदेश के शाहजहाँपुर शहर के खिरनीबाग मुहल्ले में जन्मे रामप्रसाद अपने पिता मुरलीधर और माता मूलमती की दूसरी सन्तान थे। उनसे पूर्व एक पुत्र पैदा होते ही मर चुका था। बालक की जन्म-कुण्डली व दोनों हाथ की दसो उँगलियों में चक्र के निशान देखकर एक ज्योतिषी ने भविष्यवाणी की थी - "यदि इस बालक का जीवन किसी प्रकार बचा रहा, यद्यपि सम्भावना बहुत कम है, तो इसे चक्रवर्ती सम्राट बनने से दुनिया की कोई भी ताकत रोक नहीं पायेगी।"[4] माता-पिता दोनों ही सिंह राशि के थे और बच्चा भी सिंह-शावक जैसा लगता था अतः ज्योतिषियों ने बहुत सोच विचार कर तुला राशि के नामाक्षर *र* पर नाम रखने का सुझाव दिया। माता-पिता दोनों ही राम के आराधक थे अतः बालक का नाम रामप्रसाद रखा गया। माँ मूलमती तो सदैव यही कहती थीं कि उन्हें राम जैसा पुत्र चाहिये था। बालक को घर में सभी लोग प्यार से *राम* कहकर ही पुकारते थे। रामप्रसाद के जन्म से पूर्व उनकी माँ एक पुत्र खो चुकी थीं अतः जादू-टोने का सहारा भी लिया गया। एक खरगोश लाया गया और नवजात शिशु के ऊपर से उतार कर आँगन में छोड़ दिया गया। खरगोश ने आँगन के दो-चार चक्कर लगाये

और फौरन मर गया। इसका उल्लेख राम प्रसाद बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में किया है। मुरलीधर के कुल ९ सन्तानें हुईं जिनमें पाँच पुत्रियाँ एवं चार पुत्र थे। आगे चलकर दो पुत्रियों एवं दो पुत्रों का भी देहान्त हो गया।[1]

बाल्यकाल से ही रामप्रसाद की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया जाने लगा। उसका मन खेलने में अधिक किन्तु पढ़ने में कम लगता था। इसके कारण उनके पिताजी तो उसकी खूब पिटायी लगाते परन्तु माँ हमेशा प्यार से यही समझाती कि "बेटा राम! ये बहुत बुरी बात है मत किया करो।" इस प्यार भरी सीख का उसके मन पर कहीं न कहीं प्रभाव अवश्य पड़ता। उसके पिता ने पहले हिन्दी का अक्षर-बोध कराया किन्तु उ से उल्लू न तो उन्होंने पढ़ना सीखा और न ही लिखकर दिखाया। उन दिनों हिन्दी की वर्णमाला में उ से उल्लू ही पढ़ाया जाता था। इस बात का वह विरोध करते थे और बदले में पिता की मार भी खाते थे। हार कर उसे उर्दू के स्कूल में भर्ती करा दिया गया। शायद यही प्राकृतिक गुण रामप्रसाद को एक क्रान्तिकारी बना पाये। लगभग १४ वर्ष की आयु में रामप्रसाद को अपने पिता की सन्दूकची से रुपये चुराने की लत पड़ गयी। चुराये गये रुपयों से उन्होंने उपन्यास आदि खरीदकर पढ़ना प्रारम्भ कर दिया एवं सिगरेट पीने व भाँग चढ़ाने की आदत भी पड़ गयी थी। कुल मिलाकर रुपये - चोरी का सिलसिला चलता रहा और रामप्रसाद अब उर्दू के प्रेमरस से परिपूर्ण उपन्यासों व गजलों की पुस्तकें पढ़ने का आदी हो गया था। संयोग से एक दिन भाँग के नशे में होने के कारण रामप्रसाद को चोरी करते हुए पकड़ लिया गया। खूब पिटाई हुई, उपन्यास व अन्य किताबें फाड़ डाली गयीं लेकिन रुपये चुराने की आदत नहीं छूटी। आगे चलकर जब उनको थोड़ी समझ आयी तभी वे इस दुर्गुण से मुक्त हो सके।[1]

रामप्रसाद ने उर्दू मिडिल की परीक्षा में उत्तीर्ण न होने पर अंग्रेजी पढ़ना प्रारम्भ किया। साथ ही पड़ोस के एक पुजारी ने रामप्रसाद को पूजा-पाठ की विधि का ज्ञान करवा दिया। पुजारी एक सुलझे हुए विद्वान व्यक्ति थे। उनके व्यक्तित्व का प्रभाव रामप्रसाद के जीवन पर भी पड़ा। पुजारी के उपदेशों के कारण रामप्रसाद पूजा-पाठ के साथ ब्रह्मचर्य का पालन करने लगा। पुजारी की देखा-देखी रामप्रसाद ने व्यायाम करना भी प्रारम्भ कर दिया। किशोरावस्था की जितनी भी कुभावनाएँ एवं बुरी आदतें मन में थीं वे भी छूट गयीं। केवल सिगरेट पीने की लत नहीं छूटी। परन्तु वह भी कुछ दिनों बाद विद्यालय के एक सहपाठी सुशीलचन्द्र सेन की सत्संगति से छूट गयी। सिगरेट छूटने के बाद रामप्रसाद का मन पढ़ाई में लगने लगा। बहुत शीघ्र ही वह अंग्रेजी के पाँचवें दर्ज़े में आ गए।[1]

रामप्रसाद में अप्रत्याशित परिवर्तन हो चुका था। शरीर सुन्दर व बलिष्ठ हो गया था। नियमित पूजा-पाठ में समय व्यतीत होने लगा था। इसी दौरान वह मन्दिर में आने वाले मुंशी इन्द्रजीत से उसका सम्पर्क हुआ। मुंशी इन्द्रजीत ने रामप्रसाद को आर्य समाज के सम्बन्ध में बताया और स्वामी दयानन्द सरस्वती की लिखी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश पढ़ने को दी। सत्यार्थ प्रकाश के गम्भीर अध्ययन से रामप्रसाद के जीवन पर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा।[1]

सन १९१५ में भाई परमानन्द की फाँसी का समाचार सुनकर रामप्रसाद ब्रिटिश साम्राज्य को समूल नष्ट करने की प्रतिज्ञा कर चुके थे, १९१६ में एक पुस्तक छपकर आ चुकी थी, कुछ नवयुवक उनसे जुड़ चुके थे, स्वामी सोमदेव का आशीर्वाद भी उन्हें प्राप्त हो चुका था। एक संगठन उन्होंने पं॰ गेंदालाल दीक्षित के मार्गदर्शन में *मातृवेदी* के नाम से खुद खड़ा कर लिया था। इस संगठन की ओर से एक

इश्तिहार और एक प्रतिज्ञा भी प्रकाशित की गयी। दल के लिये धन एकत्र करने के उद्देश्य से रामप्रसाद ने, जो अब तक 'बिस्मिल' के नाम से प्रसिद्ध हो चुके थे, जून १९१८ में दो तथा सितम्बर १९१८ में एक - कुल मिलाकर तीन डकैती भी डालीं, जिससे पुलिस सतर्क होकर इन युवकों की खोज में जगह-जगह छापे डाल रही थी। २६ से ३१ दिसम्बर १९१८ तक दिल्ली में लाल किले के सामने हुए कांग्रेस अधिवेशन में इस संगठन के नवयुवकों ने चिल्ला-चिल्ला कर जैसे ही पुस्तकें बेचना शुरू किया कि पुलिस ने छापा डाला किन्तु बिस्मिल की सूझ बूझ से सभी पुस्तकें बच गयीं।

पण्डित गेंदालाल दीक्षित का जन्म यमुना किनारे स्थित मई गाँव में हुआ था। इटावा जिले के एक प्रसिद्ध कस्बे औरैया के डीएवी स्कूल में अध्यापक थे। देशभक्ति का जुनून सवार हुआ तो *शिवाजी समिति* के नाम से एक संस्था बना ली और हथियार एकत्र करने शुरू कर दिये। आगरा में हथियार लाते हुए पकड़े गये थे। किले में कैद थे वहाँ से पुलिस को चकमा देकर रफूचक्कर हो गये। बिस्मिल की *मातृवेदी* संस्था का विलय शिवाजी समिति में करने के बाद दोनों ने मिलकर कई काम किये। एक बार पुन: पकड़े गये, पुलिस पीछे पड़ी थी, भाग कर दिल्ली चले गये जहां उनका प्राणान्त हुआ। बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में पण्डित गेन्दालाल जी का बड़ा मार्मिक वर्णन किया है।

मैनपुरी षडयंत्र में शाहजहाँपुर से ६ युवक शामिल हुए थे जिनके लीडर रामप्रसाद बिस्मिल थे किन्तु वे पुलिस के हाथ नहीं आये, तत्काल फरार हो गये। १ नबम्बर १९१९ को मजिस्ट्रेट बी॰ एस॰ क्रिस ने मैनपुरी षडयन्त्र का फैसला सुना दिया। जिन-जिन को सजायें हुईं उनमें मुकुन्दीलाल के अलावा सभी को फरवरी १९२०

में आम माफी के ऐलान में छोड़ दिया गया। बिस्मिल पूरे २ वर्ष भूमिगत रहे। उनके दल के ही कुछ साथियों ने शाहजहाँपुर में जाकर यह अफवाह फैला दी कि भाई रामप्रसाद तो पुलिस की गोली से मारे गये जबकि सच्चाई यह थी कि वे पुलिस मुठभेड़ के दौरान यमुना में छलाँग लगाकर पानी के अन्दर ही अन्दर योगाभ्यास की शक्ति से तैरते हुए मीलों दूर आगे जाकर नदी से बाहर निकले और जहाँ आजकल ग्रेटर नोएडा आबाद हो चुका है वहाँ के निर्जन बीहड़ों में चले गये। वहाँ उन दिनों केवल बबूल के ही वृक्ष हुआ करते थे; और ऊसर जमीन में आदमी तो कहीं दूर-दूर तक दिखता ही नहीं था।

सरकारी ऐलान के बाद राम प्रसाद बिस्मिल ने अपने वतन शाहजहाँपुर आकर पहले *भारत सिल्क मैनुफैक्चरिंग कम्पनी* में मैनेजर के पद पर कुछ दिन नौकरी की उसके बाद सदर बाजार में रेशमी साड़ियों की दुकान खोलकर बनारसीलाल के साथ व्यापार शुरू कर दिया। व्यापार में उन्होंने नाम और नामा दोनों कमाया। कांग्रेस जिला समिति ने उन्हें लेखा परीक्षक के पद पर कार्यकारी कमेटी में ले लिया। सितम्बर १९२० में वे कलकत्ता कांग्रेस में शाहजहाँपुर काँग्रेस कमेटी के अधिकृत प्रतिनिधि के रूप में शामिल हुए। कलकत्ते में उनकी भेंट लाला लाजपत राय से हुई। लाला जी ने जब उनकी लिखी हुई पुस्तकें देखीं तो वे उनसे काफी प्रभावित हुए। उन्होंने उनका परिचय कलकत्ता के कुछ प्रकाशकों से करा दिया जिनमें एक **उमादत्त शर्मा** भी थे, जिन्होंने आगे चलकर सन् १९२२ में राम प्रसाद बिस्मिल की एक पुस्तक **कैथेराइन** छापी थी। सन् १९२१ के अहमदाबाद कांग्रेस अधिवेशन में रामप्रसाद'बिस्मिल' ने पूर्ण स्वराज के प्रस्ताव पर **मौलाना हसरत मोहानी** का खुलकर समर्थन किया और अन्ततोगत्वा गांधी जी से असहयोग

आन्दोलन प्रारम्भ करने का प्रस्ताव पारित करवा कर ही माने। इस कारण वे युवाओं में काफी लोकप्रिय हो गये। समूचे देश में असहयोग आन्दोलन शुरू करने में शाहजहाँपुर के स्वयंसेवकों की अहम् भूमिका थी। किन्तु १९२२ में जब चौरीचौरा काण्ड के पश्चात किसी से परामर्श किये बिना गांधी जी ने असहयोग आन्दोलन वापस ले लिया तो १९२२ की गया कांग्रेस में बिस्मिल व उनके साथियों ने गांधी जी का ऐसा विरोध किया कि कांग्रेस में फिर दो विचारधारायें बन गयीं - एक उदारवादी या लिबरल और दूसरी विद्रोही या रिबेलियन। गांधी जी विद्रोही विचारधारा के नवयुवकों को कांग्रेस की आम सभाओं में विरोध करने के कारण हमेशा हुल्लड़बाज कहा करते थे। एक बार तो उन्होंने जवाहरलाल नेहरू को पत्र लिखकर क्रान्तिकारी नवयुवकों का साथ देने पर बुरी तरह फटकार भी लगायी थी।

सी॰ आई॰ डी॰ ने गम्भीर छानबीन करके सरकार को इस बात की पुष्टि कर दी कि काकोरी ट्रेन डकैती क्रान्तिकारियों का एक सुनियोजित षड्यन्त्र है। पुलिस ने काकोरी काण्ड के सम्बन्ध में जानकारी देने व षड्यन्त्र में शामिल किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार करवाने के लिये इनाम की घोषणा के विज्ञापन सभी प्रमुख स्थानों पर लगा दिये। इसका परिणाम यह हुआ कि पुलिस को घटनास्थल पर मिली चादर में लगे धोबी के निशान से इस बात का पता चल गया कि चादर शाहजहाँपुर के ही किसी व्यक्ति की है। शाहजहाँपुर के धोबियों से पूछने पर मालूम हुआ कि चादर बनारसी लाल की है। बनारसी लाल से मिलकर पुलिस ने सारा भेद प्राप्त कर लिया। यह भी पता चल गया कि ९ अगस्त १९२५ को शाहजहाँपुर से उसकी पार्टी के कौन-कौन लोग शहर से बाहर गये थे और वे कब-कब वापस आये? जब खुफिया

तौर से इस बात की पुष्टि हो गयी कि राम प्रसाद बिस्मिल, जो एच॰ आर॰ ए॰ का लीडर था, उस दिन शहर में नहीं था तो २६ सितम्बर १९२५ की रात में बिस्मिल के साथ समूचे हिन्दुस्तान से ४० से भी अधिक[18] लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया।

काकोरी काण्ड में केवल १० ही लोग वास्तविक रूप से शामिल हुए थे अत: उन सभी को नामजद किया गया। इनमें से पाँच - चन्द्रशेखर आजाद, मुरारी शर्मा[19] (छद्मनाम), केशव चक्रवर्ती (छद्मनाम), अशफाक उल्ला खाँ व शचीन्द्र नाथ बख्शी को छोड़कर, जो पुलिस के हाथ नहीं आये, शेष सभी व्यक्तियों पर अभियोग चला और उन्हें ५ वर्ष की कैद से लेकर फाँसी तक की सजा सुनायी गयी। फरार अभियुक्तों के अतिरिक्त जिन-जिन क्रान्तिकारियों को **एच॰ आर॰ ए॰** का सक्रिय कार्यकर्ता होने के सन्देह में गिरफ्तार किया गया था उनमें से १६ को साक्ष्य न मिलने के कारण रिहा कर दिया गया। स्पेशल मजिस्ट्रेट ऐनुद्दीन ने प्रत्येक क्रान्तिकारी की छबि खराब करने में कोई कसर बाकी नहीं रक्खी। सिर्फ़ इतना ही नहीं, केस को सेशन कोर्ट में भेजने से पहले ही इस बात के सभी साक्षी व साक्ष्य एकत्र कर लिये थे कि यदि अपील भी की जाये तो एक भी अभियुक्त बिना सजा के छूटने न पाये। बनारसी लाल को हवालात में ही पुलिस ने कड़ी सजा का भय दिखाकर तोड़ लिया। शाहजहाँपुर जिला काँग्रेस कमेटी में पार्टी-फण्ड को लेकर इसी बनारसी का बिस्मिल से झगड़ा हो चुका था। बिस्मिल ने, जो उस समय जिला काँग्रेस कमेटी के ऑडीटर थे, बनारसी पर पार्टी-फण्ड में गबन का आरोप सिद्ध करते हुए उसे काँग्रेस पार्टी की प्राथमिक सदस्यता से निलम्बित कर दिया था। बाद में जब गांधी जी १६ अक्टूबर १९२० (शनिवार) को शाहजहाँपुर आये तो बनारसी

ने उनसे मिलकर अपना पक्ष रक्खा। गान्धी जी ने उस समय यह कहकर कि छोटी-मोटी हेरा-फेरी को इतना तूल नहीं देना चाहिये, इन दोनों में सुलह करा दी। परन्तु बनारसी बड़ा ही धूर्त आदमी था। उसने पहले तो बिस्मिल से माफी माँग ली फिर गांधी जी को अलग ले जाकर उनके कान भर दिये कि रामप्रसाद बड़ा ही अपराधी किस्म का व्यक्ति है। वे इसकी किसी बात का न तो स्वयं विश्वास करें न ही किसी और को करने दें।

आगे चलकर इसी बनारसी लाल ने बिस्मिल से मित्रता कर ली और मीठी-मीठी बातों से पहले उनका विश्वास अर्जित किया और उसके बाद उनके साथ कपड़े के व्यापार में साझीदार बन गया। जब बिस्मिल ने गान्धी जी की आलोचना करते हुए अपनी अलग पार्टी बना ली तो बनारसी लाल अत्यधिक प्रसन्न हुआ और मौके की तलाश में चुप साधे बैठा रहा। पुलिस ने स्थानीय लोगों से बिस्मिल व बनारसी के पिछले झगड़े का भेद जानकर ही बनारसी लाल को अप्रूवर (सरकारी गवाह) बनाया और बिस्मिल के विरुद्ध पूरे अभियोग में एक अचूक औजार की तरह इस्तेमाल किया। बनारसी लाल व्यापार में साझीदार होने के कारण पार्टी सम्बन्धी ऐसी-ऐसी गोपनीय बातें जानता था, जिन्हें बिस्मिल के अतिरिक्त और कोई भी न जान सकता था। इसका उल्लेख राम प्रसाद बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा में किया है।

लखनऊ जिला जेल, जो उन दिनों संयुक्त प्रान्त (यू॰पी॰) की सेण्ट्रल जेल कहलाती थी, की ११ नम्बर बैरक[20] में सभी क्रान्तिकारियों को एक साथ रक्खा गया और हजरतगंज चौराहे के पास रिंग थियेटर नाम की एक आलीशान बिल्डिंग में अस्थाई अदालत का निर्माण किया गया। रिंग थियेटर नाम की यह बिल्डिंग कोठी हयात

बख्श और मल्लिका अहद महल के बीच हुआ करती थी जिसमें ब्रिटिश अफसर आकर फिल्म व नाटक आदि देखकर मनोरंजन किया करते थे। इसी रिंग थियेटर में लगातार १८ महीने तक *किंग इम्परर वर्सेस राम प्रसाद 'बिस्मिल' एण्ड अदर्स* के नाम से चलाये गये ऐतिहासिक मुकदमे में ब्रिटिश सरकार ने १० लाख रुपये[18] उस समय खर्च किये थे जब सोने का मूल्य २० रुपये तोला (१२ ग्राम) हुआ करता था। ब्रिटिश हुक्मरानों के आदेश से यह बिल्डिंग भी बाद में ढहा दी गयी और उसकी जगह सन १९२९-१९३२ में जी॰ पी॰ ओ॰ (मुख्य डाकघर) लखनऊ[21] के नाम से एक दूसरा भव्य भवन बना दिया गया। १९४७ में जब भारत आजाद हो गया तो यहाँ गांधी जी की भव्य प्रतिमा स्थापित करके रही सही कसर नेहरू सरकार ने पूरी कर दी। जब केन्द्र में गैर काँग्रेसी जनता सरकार का पहली बार गठन हुआ तो उस समय के जीवित क्रान्तिकारियों के सामूहिक प्रयासों से सन् १९७७ में आयोजित **काकोरी शहीद अर्द्धशताब्दी समारोह** के समय यहाँ पर काकोरी स्तम्भ का अनावरण उत्तर प्रदेश के राज्यपाल गणपतिराव देवराव तपासे ने किया ताकि उस स्थल की स्मृति बनी रहे।

इस ऐतिहासिक मुकदमे में सरकारी खर्चे से हरकरननाथ मिश्र को क्रान्तिकारियों का वकील नियुक्त किया गया जबकि जवाहरलाल नेहरू के रिश्ते में साले लगने वाले सुप्रसिद्ध वकील जगतनारायण 'मुल्ला' को एक सोची समझी रणनीति के अन्तर्गत सरकारी वकील बनाया गया।[22] जगत नारायण ने अपनी ओर से सभी क्रान्तिकारियों को कड़ी से कड़ी सजा दिलवाने में कोई कसर बाकी न रक्खी। यह वही जगत नारायण थे जिनकी मर्जी के खिलाफ सन् १९१६ में बिस्मिल ने लोकमान्य बालगंगाधर तिलक की भव्य शोभायात्रा पूरे लखनऊ शहर में निकाली

थी। इसी बात से चिढ़ कर मैनपुरी षडयंत्र में भी इन्हीं मुल्लाजी ने सरकारी वकील की हैसियत से काफी जोर लगाया परन्तु वे राम प्रसाद बिस्मिल का एक भी बाल बाँका न कर पाये क्योंकि मैनपुरी षडयन्त्र में बिस्मिल फरार हो गये थे और दो साल तक पुलिस के हाथ ही न आये।

१६ दिसम्बर १९२७ को बिस्मिल ने अपनी आत्मकथा का आखिरी अध्याय (अन्तिम समय की बातें) पूर्ण करके जेल से बाहर भिजवा दिया। १८ दिसम्बर १९२७ को माता-पिता से अन्तिम मुलाकात की और सोमवार १९ दिसम्बर १९२७ (पौष कृष्ण एकादशी विक्रमी सम्वत् १९८४) को प्रात:काल ६ बजकर ३० मिनट पर गोरखपुर की जिला जेल में उन्हें फाँसी दे दी गयी। बिस्मिल के बलिदान का समाचार सुनकर बहुत बड़ी संख्या में जनता जेल के फाटक पर एकत्र हो गयी। जेल का मुख्य द्वार बन्द ही रक्खा गया और फाँसीघर के सामने वाली दीवार को तोड़कर बिस्मिल का शव उनके परिजनों को सौंप दिया गया। शव को डेढ़ लाख लोगों ने जुलूस निकाल कर पूरे शहर में घुमाते हुए राप्ती नदी के किनारे राजघाट पर उसका अन्तिम संस्कार कर दिया।[24]

इस घटना से आहत होकर भगतसिंह ने जनवरी १९२८ के किरती (पंजाबी मासिक) में 'विद्रोही' छद्मनाम नाम से लिखा: "फाँसी पर ले जाते समय आपने बड़े जोर से कहा - 'वन्दे मातरम! भारतमाता की जय!' और शान्ति से चलते हुए कहा - 'मालिक तेरी रज़ा रहे और तू ही तू रहे, बाकी न मैं रहूँ न मेरी आरजू रहे; जब तक कि तन में जान रगों में लहू रहे, तेरा ही जिक्र और तेरी जुस्तजू रहे!' फाँसी के तख्ते पर खड़े होकर आपने कहा - *'I wish the downfall of British Empire!* अर्थात मैं ब्रिटिश साम्राज्य का पतन चाहता हूँ!' उसके पश्चात यह शेर

कहा - 'अब न अह्ले-वल्वले हैं और न अरमानों की भीड़, एक मिट जाने की हसरत अब दिले-बिस्मिल में है!' फिर ईश्वर के आगे प्रार्थना की और एक मन्त्र पढ़ना शुरू किया। रस्सी खींची गयी। रामप्रसाद जी फाँसी पर लटक गये।"

अपने लेख के अन्त में भगतसिंह लिखते हैं - "आज वह वीर इस संसार में नहीं है। उसे अंग्रेजी सरकार ने अपना सबसे बड़ा खौफ़नाक दुश्मन समझा। आम ख्याल यही था कि वह गुलाम देश में जन्म लेकर भी सरकार के लिये बड़ा भारी खतरा बन गया था और लड़ाई की विद्या से खूब परिचित था। आपको मैनपुरी षड्यन्त्र के नेता श्री गेंदालाल दीक्षित जैसे शूरवीर ने विशेष तौर पर शिक्षा देकर तैयार किया था। मैनपुरी के मुकदमे के समय आप भागकर नेपाल चले गये थे। अब वही शिक्षा आपकी मृत्यु का कारण बनी। ७ बजे आपकी लाश मिली और बड़ा भारी जुलूस निकला। 'स्वदेश' में प्रकाशित एक समाचार के अनुसार आपकी माता ने कहा था - 'मैं अपने पुत्र की इस मृत्यु पर प्रसन्न हूँ, दुःखी नहीं। मैं श्री रामचन्द्र जैसा ही पुत्र चाहती थी। वैसा ही मेरा 'राम' था। बोलो श्री रामचन्द्र की जय!'

इत्र फुलेल और फूलों की वर्षा के बीच उनकी लाश का जुलूस जा रहा था। दुकानदारों ने उनके शव के ऊपर वेशुमार पैसे फेंके। दोपहर ११ बजे आपकी लाश शमशान-भूमि पहुँची और अन्तिम-क्रिया समाप्त हुई। आपके पत्र का आखिरी हिस्सा आपकी सेवा में प्रस्तुत है - 'मैं खूब सुखी हूँ। १९ तारीख को प्रातः जो होना है उसके लिये तैयार हूँ। परमात्मा मुझे काफी शक्ति देंगे। मेरा विश्वास है कि मैं लोगों की सेवा के लिये फिर जल्द ही इस देश में जन्म लूँगा। सभी से मेरा नमस्कार कहें। दया कर इतना काम और करना कि मेरी ओर से पण्डित जगतनारायण (सरकारी वकील, जिन्होंने इन्हें फाँसी लगवाने के लिये बहुत जोर लगाया था) को

अन्तिम नमस्कार कह देना। उन्हें हमारे खून से लथपथ रुपयों के बिस्तर पर चैन की नींद आये। बुढ़ापे में ईश्वर उन्हें सद्बुद्धि दे।"

रामप्रसाद जी की सारी हसरतें दिल-ही-दिल में रह गयीं। आपने एक लम्बा-चौड़ा ऐलान किया है जिसे संक्षेप में हम दूसरी जगह दे रहे हैं। फाँसी से दो दिन पहले सी.आई.डी. के डिप्टी एस.पी. और सेशन जज मि. हैमिल्टन आपसे मिन्नतें करते रहे कि आप मौखिक रूप से सब बातें बता दो। आपको पन्द्रह हजार रुपया नकद दिया जायेगा और सरकारी खर्चे पर विलायत भेजकर बैरिस्टर की पढ़ाई करवाई जायेगी। लेकिन आप कब इन सब बातों की परवाह करते थे। आप तो हुकूमतों को ठुकराने वाले व कभी-कभार जन्म लेने वालों में से थे। मुकदमे के दिनों आपसे जज ने पूछा था - 'आपके पास कौन सी डिग्री है?' तो आपने हँसकर जवाब दिया था - 'सम्राट बनाने वालों को डिग्री की कोई जरूरत नहीं होती, क्लाइव के पास भी तो कोई डिग्री नहीं थी।' आज वह वीर हमारे बीच नहीं है, आह!"[25]

भारतवर्ष को ब्रिटिश साम्राज्य से मुक्त कराने में यूँ तो असंख्य वीरों ने अपना अमूल्य बलिदान दिया परन्तु राम प्रसाद बिस्मिल एक ऐसे अद्भुत क्रान्तिकारी थे जिन्होंने अत्यन्त निर्धन परिवार में जन्म लेकर साधारण शिक्षा के बावजूद असाधारण प्रतिभा और अखण्ड पुरुषार्थ के बल पर *हिन्दुस्तान प्रजातन्त्र संघ* के नाम से देशव्यापी संगठन खड़ा किया जिसमें एक - से - बढ़कर एक तेजस्वी व मनस्वी नवयुवक शामिल थे जो उनके एक इशारे पर इस देश की व्यवस्था में आमूल परिवर्तन कर सकते थे किन्तु अहिंसा की दुहाई देकर उन्हें एक-एक करके मिटाने का क्रूरतम षड्यन्त्र जिन्होंने किया उन्हीं का चित्र भारतीय पत्र मुद्रा (Paper Currency) पर दिया जाता है। जबकि अमरीका में एक व दो अमरीकी

डॉलर पर आज भी जॉर्ज वाशिंगटन का ही चित्र छपता है जिसने अमरीका को अँग्रेजों से मुक्त कराने में प्रत्यक्ष रूप से आमने-सामने युद्ध लड़ा था।

बिस्मिल की पहली पुस्तक सन् १९१६ में छपी थी जिसका नाम था-*अमेरिका की स्वतन्त्रता का इतिहास*। बिस्मिल के *जन्म शताब्दी वर्ष: १९९६-१९९७* में यह पुस्तक स्वतन्त्र भारत में फिर से प्रकाशित हुई जिसका विमोचन भारत के पूर्व प्रधानमन्त्री अटल बिहारी वाजपेयी ने किया।"[30] उस कार्यक्रम में राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के तत्कालीन सरसंघचालक प्रो॰ राजेन्द्र सिंह (रज्जू भैया) भी उपस्थित थे।[31] इस सम्पूर्ण ग्रन्थावली में बिस्मिल की लगभग दो सौ प्रतिबन्धित कविताओं के अतिरिक्त पाँच पुस्तकें भी शामिल की गयी थीं। परन्तु आज तक किसी भी सरकार ने बिस्मिल के क्रान्ति-दर्शन को समझने व उस पर शोध करवाने का प्रयास ही नहीं किया। जबकि गान्धी जी द्वारा १९०९ में विलायत से हिन्दुस्तान लौटते समय पानी के जहाज पर लिखी गयी पुस्तक हिन्द स्वराज पर अनेकौं संगोष्ठियाँ हुईं। बिस्मिल सरीखे असंख्य शहीदों के सपनों का भारत बनाने की आवश्यकता है।